सन्दर्भ और स्वतंत्रता बनाते हैं लिखने को आसान

सुमन पटैल

लिखना सीखना एक ज़रूरी कौशल है। स्कूलों में बच्चों को लिखना सिखाने की कई क़वायदें की जाती हैं, लेकिन तब भी बच्चे लिखना नहीं सीख पाते। यहाँ तक कि वे बच्चे भी, जो अक्षरों और मात्राओं को जानते हैं, शब्द और वाक्य बनाना जानते हैं, भाषा जानते हैं, लिख नहीं पाते। इस लेख में लेखिका कहती हैं कि समस्या लेखन के अभ्यासों में है। बच्चे अपने अनुभवों को, अपने अवलोकनों को लिखने की पूरी क्षमता रखते हैं, लेकिन लिखने के लिए न तो ऐसे अभ्यास उन्हें दिए जाते हैं न ही ऐसे अभ्यास चुनने की स्वतंत्रता। उनके द्वारा प्रस्तुत बच्चों के लेखन के नमूने यह दर्शाते हैं कि उपयुक्त अभ्यास बच्चों को लिखने के लिए प्रेरित करते हैं, और उनकी दिलचस्पी को भी बनाए रखते हैं। –सं.

अपनी फ़ील्ड विज़िट के दौरान मेरा एक नए स्कूल में जाना हुआ। वहाँ पहले मेरा शिक्षक से परिचय हुआ, फिर मैंने स्कूल के बारे में सामान्य बातचीत की। उस स्कूल में प्राथमिक कक्षाओं के लिए केवल दो ही शिक्षक पदस्थ थे। जिन शिक्षक से मैं मिली, वह पाँचवीं कक्षा को पढ़ाते थे। उनके साथ ही मैं उनकी कक्षा में गई। मैंने अपना परिचय दिया, और बच्चों ने भी अपने-अपने नाम बताए। उन सबमें से जब एक बच्ची की परिचय देने की बारी आई, वह कुछ नहीं बोली। शिक्षक ने कहा, "वह थोड़ी मन्दबुद्धि है। उसे जल्दी कुछ भी समझ नहीं आता।" शिक्षक की अलग चिन्ता थी। वे बोले, "पाँचवीं में बोर्ड की परीक्षा है। कक्षा के वो बच्चे जो कुछ नहीं जानते, वह पाँचवीं की बोर्ड परीक्षा में पास कैसे होंगे?" फिर उन्होंने कक्षा के दूसरे बच्चों के बारे में बताया जिनसे पढ़ते-लिखते नहीं बनता था, और वे कक्षा में ज़्यादा बातचीत भी नहीं करते थे। इतने में बच्चों का लंच ब्रेक हो गया।

मैं कक्षा के दरवाज़े पर आकर बैठ गई, तभी मेरा ध्यान उन बच्चों पर गया जो कक्षा में परिचय के दौरान कुछ नहीं बोल रहे थे। विशेष रूप से उस बच्ची पर जिसने मुझे झिझककर अपना नाम नहीं बताया था। स्कूल के गलियारे में वह अपने एक सहपाठी को पीट रही थी। थोड़ी देर बाद वह खेलने लगी। दूसरे बच्चे भी स्कूल के गलियारे में अपने सहपाठियों के साथ बहुत मज़े से खेल रहे थे। बहुत सारे अलग-अलग समूह बनाए हुए बच्चे अलग-अलग खेल, खेल रहे थे। अब मुझे यह जानने की बहुत उत्सुकता हुई कि जिस बच्ची ने कक्षा में इतनी बार पूछने पर नाम तक नहीं बताया था, वह अपने सहपाठियों के साथ खेल रही थी, बातें कर रही थी, और लड़ रही थी। वो सभी क्रियाएँ उस तरीक़े से ही कर रही थी जो एक सामान्य बच्चा करता है। फिर उसे मुझसे बात करने और मेरे सवालों के जवाब देने में दिक़्क़त कहाँ आ रही थी। जो शब्द 'मन्दबुद्धि' इस बच्ची के लिए प्रयोग किया गया था, वह भी मुझे ग़लत लग रहा था। लेकिन मेरे मन में यह बात लगातार घूम रही थी कि क्यों कुछ बच्चे कक्षा में बोलते नहीं हैं। शिक्षक की वह बात भी साथ-साथ

दिमाग़ में चल रही थी कि ये पढ़ने-लिखने में भी रुचि नहीं दिखाते हैं। आख़िर क्यों?

मेरी इस उत्सुकता के साथ मैंने बच्चों से बात करना शुरू किया, और बच्चों के एक समूह में जाकर बैठ गई। उस समूह में बच्चे मुझे देखकर असहज हो गए, और रुक गए। बच्चे समूह में जिस खेल को खेल रहे थे, उसे मैं भी अपने बचपन में खेलती थी। मुझे याद था वो खेल। मैंने तुरन्त स्थानीय भाषा बुन्देलखण्डी में बोलना शुरू कर दिया। मैंने उस खेल के कुछ स्टेप बताए, और बच्चों से आगे खेलने के लिए कहा। भाषा के बदलते ही बच्चों में सहजता आई। शायद मैं बच्चों को कम अजनबी लगने लगी। यह सब चन्द पलों में ही हुआ, और उन्होंने पुनः खेलना शुरू कर दिया।

ऐसे ही मैं कई समूहों में गई जहाँ बच्चे अलग-अलग खेल, खेल रहे थे। समूह में जाकर बच्चों से उनके खेल के बारे में बातचीत की, और बच्चों ने उस खेल के नियम, विधि, आदि विस्तार से मुझे बताए। अब लंच ब्रेक ख़त्म हुआ। चूँकि शिक्षक कक्षा में नहीं आए थे, इसलिए बच्चे गलियारे में खेल खेलने लगे। मैं बच्चों के पास गई, और उनके खेल के दौरान के अनुभवों पर बातचीत की। बच्चे मज़े से अपने अनुभव बता रहे थे। उसके बाद मैंने बच्चों से कहा, "वह खेल जो आप खेल रहे थे, उसको लिखकर बताओगे कि वह कैसे खेला जाता है?" पहले बच्चों की तरफ़ से आया, "लिखते नहीं बनेगा।" मैंने बच्चों से कहा, "जैसा बने, वैसा लिखो।" बच्चे बहुत शर्माए, और उनमें से कोई भी लिखने को तैयार नहीं था। फिर मैंने उनसे कहा, "मुझे यह खेल दूसरी जगह खिलवाना है दूसरे बच्चों के साथ, अगर आप लिखकर दोगे, मुझे आसानी होगी।" बच्चे फिर भी नहीं माने। वही पुरानी रट, कि लिखते बिलकुल नहीं बनेगा। मैं भी प्रयास करती रही, और बहुत बार न कहने के बाद बच्चे लिखने के लिए तैयार हो ही गए।

अब उस बच्ची, जो पाँचवीं कक्षा में पढ़ती थी और उस दौरान अपना नाम नहीं बता रही थी, ने एक स्थानीय खेल 'पाँच चपेटे' के बारे में लिखा। यह खेल पाँच छोटे-छोटे पत्थरों के माध्यम से खेला जाता है।

चित्र में उस बच्ची के लिखे को देखिए। बच्ची ने खेल के बारे में लिखने से पहले उसका शीर्षक लिखा है, और उसके बाद खेल की सामग्री के बारे में। जिसके बग़ैर यह खेल नहीं खेला जा सकता। वह लिखती है, "पाँच पत्थर बीन के लाना है...।" बच्ची को इतनी समझ है कि जब वह किसी खेल, कविता, कहानी,

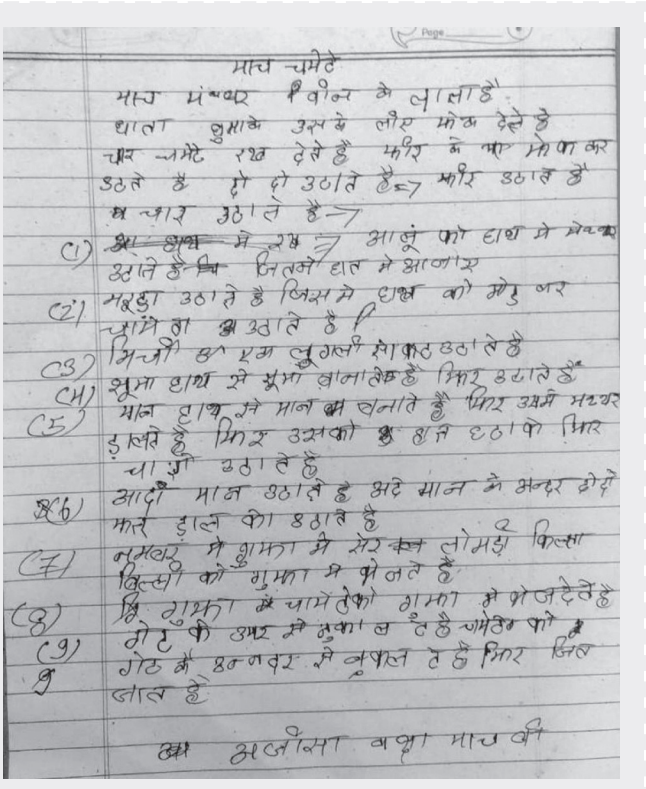

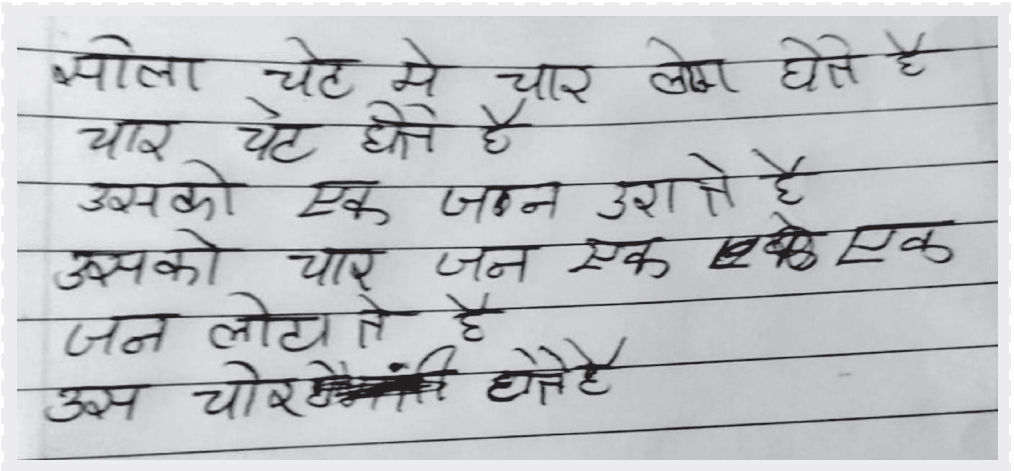

आदि को लिखते हैं, उसका शीर्षक लिखना भी महत्त्वपूर्ण होता है। वो यह भी समझ रखती है कि किसी कार्य या खेल के लिए सामग्री सबसे महत्त्वपूर्ण होती है, और लेखन में उसका ज़िक्र करना ज़रूरी होता है।

उसके बाद उस बच्ची ने स्टेप-बाय-स्टेप उस पूरे खेल के बारे में लिखा है। जैसे– उसने पहला स्टेप आलू को लिखा है जिसमें चपेटे ऊपर फेंके जाते हैं। दूसरा स्टेप उसने मरूडा लिखा है जिसमें हाथ मोड़कर उठाते हैं। तीसरा स्टेप मिर्ची लिखा है, जिसमें उसने उँगली को 'लुगली' लिखा है। उसके बाद सूपा, पान, आधा पान, गुफा और गेट के स्टेप में खेल का पूरा विवरण किया है। जब उसने खेल का पूरा विवरण लिख दिया, मैंने उससे पूछा, "अब बताओ कि इसमें क्या लिखा है।" वह अपने लिखे शब्दों को समझ रही थी, और कुछ शब्द समझ के साथ पढ़कर पूरा वाक्य मुझे बता देती। फिर मैंने उससे कहा, "पढ़कर नहीं, अब मुझे बोलकर बताओ।" उसने अपनी भाषा में खेल के सारे नियम, विधि, आदि मुझे बता दी।

इस पूरे वाक़िए से मुझे एक बात समझ में आई कि कक्षा 4-5 के जिन बच्चों के बारे में शिक्षक यह मानकर चलते हैं कि वे नहीं लिख सकते, वैसे अधिकांश बच्चे लिखना जानते हैं, और इस स्तर पर स्वतंत्र रूप से लिख सकते हैं। बशर्ते, उससे जुड़ा हुआ अनुभव उनके पास हो। अगर उनके अनुभव से उनको लिखने को कहा जाए, तब उनके पास शब्दों की कोई कमी नहीं होती। जैसे ही उनको उनके अनुभव बाहर की बातें लिखने को कहते हैं, वे शब्दों का अचानक अभाव महसूस करने लगते हैं, और लिखने में असमर्थ हो जाते हैं।

इसी तरह से मैंने एक अन्य स्कूल में पाँचवीं कक्षा के बच्चों से बातचीत की। उस स्कूल में पाँचवीं कक्षा में उस दिन 14 बच्चे आए हुए थे। उनसे बातचीत के दौरान मैंने ध्यान दिया कि उन 14 में से 5 बच्चे ऐसे थे जो कक्षा में ज़्यादा बातचीत नहीं कर रहे थे। कक्षा में जो बातचीत हो रही थी उसपर भी वे ज़्यादा ध्यान नहीं दे रहे थे। मैंने उस समूह पर ज़्यादा फ़ोकस किया, और उन 5 बच्चों से उनके द्वारा रोज़ खेले जाने वाले खेलों पर बातचीत करना शुरू किया। उस बातचीत में बच्चों ने प्रतिभाग किया, और कई तरह के खेल बताए जो वह रोज़ खेलते हैं। उनके अनुभव सुनने के बाद मैंने उन बच्चों से लिखने के लिए कहा, और एक बच्चा, जो कक्षा में शिक्षक के आने से पहले एक खेल, खेल रहा था, उसको लिखने के लिए तैयार हो गया। उसने एक स्थानीय खेल 'चोर-चिट' के बारे में लिखा। फिर दूसरे बच्चे भी उसको देखकर लिखने के

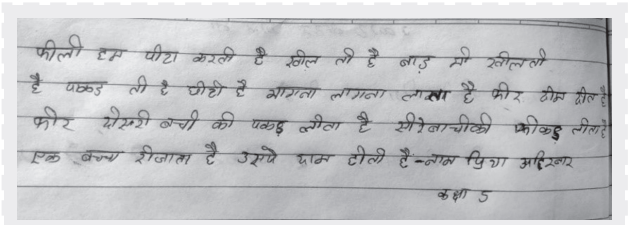

कक्षा 5

लिए तैयार हो गए। बस, यहाँ बच्चों को मैंने यह निर्देश दिया था कि सही-ग़लत की चिन्ता नहीं करनी है। बस लिखना है, और जैसा बने वैसा लिखना है। बच्चों ने लिखने की कोशिश की, और उसे सही ढंग से लिखा भी।

'चोर-चिट' के बारे में दो अलग-अलग स्कूलों के बच्चों द्वारा लिखा गया है। ये ऐसे बच्चे हैं, जिनको अगर कुछ नक़ल करने के लिए दिया जाए, तब वह उसे लिख लेते हैं, पर उनसे अगर कुछ भी स्वतंत्र रूप से लिखने को कहा जाए, वे नहीं लिख पाते। वे शिक्षिका के सामने बोलते भी बहुत ज़्यादा नहीं हैं, पर शिक्षिका द्वारा कराए गए कार्य को कॉपी में उतार लेते हैं। वह भी उतना ही जितना शिक्षिका द्वारा बताया गया है। पहली बार यह स्वतंत्र लेखन उन्होंने किया था।

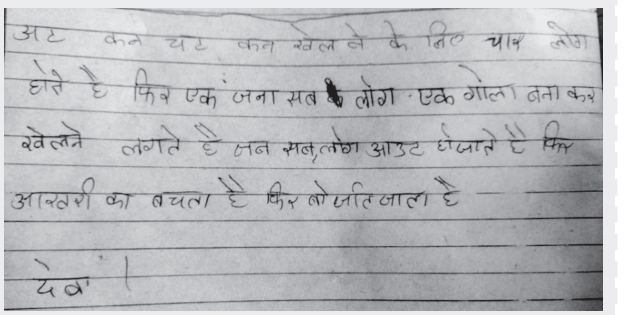

एक और स्कूल में भी मैंने इसी प्रक्रिया को अपनाया जिसमें अपने अवलोकन के माध्यम से ऐसे बच्चों का चुनाव किया जो कक्षा में ज़्यादा बोलते नहीं हैं, और शिक्षक का कहना होता है कि ये लिख-पढ़ भी नहीं पाते। बच्चों द्वारा लिखने के लिए मैंने सिर्फ़ रोज़ाना खेले जाने वाले खेलों को ही रखा, क्योंकि हर बच्चे के पास रोज़ाना के खेल, खेलने से जुड़ा कोई-न-कोई अनुभव होता है, फिर चाहे वह स्कूल में खेला गया खेल हो या घर में खेला गया खेल।

ऐसे ही दो बच्चों ने एक स्थानीय खेल 'अटकन चटकन दही बड़ाकन' खेलने की प्रक्रिया को लिखा था।

स्वतंत्र लेखन के ये सभी नमूने कक्षा 5 के बच्चों द्वारा लिखे गए हैं। अब जब मैंने यह कार्य किया, मुझे समझ आया कि बच्चे स्कूलों में स्वतंत्र रूप से इसलिए नहीं लिख पाते क्योंकि उनके पास उस बात को लिखने के लिए शब्द भण्डार नहीं होता है। दूसरी सबसे बड़ी बात यह कि उस चीज़ से उनका ख़ुद से जुड़ा कोई अनुभव नहीं होता, और जिस चीज़ का अनुभव होता भी है उसको लिखना कैसे है, यह बच्चों को पता नहीं होता है। जैसे– कक्षा चौथी में एक शिक्षिका ने 'नर्मदा की आत्मकथा' पाठ पढ़ाने के बाद बच्चों को नर्मदा के ऊपर स्वतंत्र लेखन करने के लिए दिया। ज़्यादातर बच्चों ने कुछ नहीं लिखा और जिन बच्चों ने लिखा भी, उन्होंने वही लिखा जो उन्होंने पाठ को पढ़ाते समय सुना था, और उन्हें याद रह गया। खेल पर जब बच्चे लिख रहे थे, उनके पास उस खेल से जुड़ा अपना अनुभव भी था, और उससे जुड़ा शब्द भण्डार भी। इसलिए जब बच्चे खेल के बारे में लिखते हैं, वे उसे अपनी भाषा में बता भी पाते हैं।

कक्षा के कुछ बच्चों के बारे में शिक्षक यह मानते हैं कि यह बच्चे लिख नहीं सकते या उनसे लिखते नहीं बनेगा। इसका कारण यह नहीं होता है कि उन्हें बिलकुल लिखना नहीं आता, बल्कि उसका एक कारण यह होता है कि बच्चों को पता ही नहीं होता कि लिखना कैसे है। स्वतंत्र लेखन के लिए सबसे ज़्यादा ज़रूरी

होता है लेख के विषय का अनुभव। अनुभव बच्चे में शब्दावली को पुष्ट करते हैं, पर उसके लिए कक्षा में ज़्यादा कार्य नहीं होता है। अनुभव, चाहे वह अवलोकन, बातचीत या परिचर्चा का ही हो, बच्चों में लेखन क्षमता बढ़ाने के लिए उपयोगी होता है।

बच्चों से हम अपेक्षा करते हैं कि स्वतंत्र लेखन में किसी विषय पर वह सीधे ही निबन्ध लिखना शुरू कर दें। पर निबन्ध लिखने के पूर्व की जो प्रक्रिया है उससे उन्हें कभी गुज़ारा ही नहीं गया होता है। लेखन में सबसे पहले बच्चों से छोटे-छोटे अनुभव लिखवाना आवश्यक होता है। जैसे– घर में चाय कैसे बनती है, पेड़ से फल या कुछ और तोड़ने, किसी खेल को खेलने, आदि का अनुभव, ताकि बच्चे को यह समझ आए कि जो उसे लिखना है वह सभी चीज़ें उसके आसपास से जुड़ी हुई हैं, और उनके बारे में वह आसानी से कल्पना कर सके। पर वास्तव में होता यह है कि बच्चे को सीधेतौर पर ही वह लिखने के लिए कहा जाता है जिसका अनुभव ही उसे नहीं होता। कक्षा के पाठों को बच्चे के अनुभव से जोड़कर नहीं पढ़ाया जाता, और उनपर बातचीत भी न के बराबर ही की जाती है। जब बच्चों से 'नर्मदा' के बारे में लिखने के लिए कहा गया, उन्हें कठिन लगा। लेकिन अगर बच्चों को नर्मदा के बारे में लिखने को कहने से पहले उनसे नदी के ऊपर बात की गई होती, या बच्चों से नदी से जुड़ा उनका कोई अपना अनुभव लिखने के लिए कहा जाता, बच्चों को लेखन में इतनी समस्या नहीं होती।

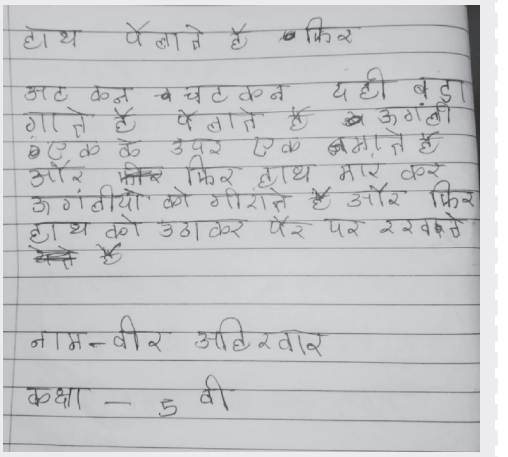

शिक्षक बच्चों को पाठ पढ़ाने का काम पाठ्यपुस्तक में दी गई मानक भाषा में करते हैं। पढ़ाते समय वे बच्चों को लगभग सभी निर्देश अपनी स्थानीय भाषा यानी बुन्देली में

देते हैं, और शिक्षकों व बच्चों के बीच थोड़ा बहुत संवाद स्थानीय भाषा में ही हो पाता है। फिर शिक्षक एक दिन बच्चों से पाठ की बातों को मानक भाषा में लिखने को कहते हैं। विद्यार्थी ऐसी स्थिति में समझ नहीं पाते कि क्या और कैसे लिखना है। और वो डिनाइल मोड में चले जाते हैं। वे यह मान लेते हैं कि उनको लिखना नहीं आता, जबकि उनको एक स्तर तक अक्षर, शब्द और व्याकरण की पहचान होती है। जब बच्चे बार-बार इस प्रक्रिया से गुज़रते हैं, उनका लेखन सम्बन्धी आत्मविश्वास तो कम होता ही है, कक्षा में बोलने का आत्मविश्वास भी प्रभावित होता है। उन्हें लगने लगता है कि कक्षा में जो वे लिख रहे हैं, वो तो ग़लत है ही, साथ ही वह जो बोलेंगे वह भी ग़लत ही होगा। इस सबके चलते बच्चे सही बात को भी कक्षा में नहीं बता पाते। हमें कक्षा में बच्चों को ज़्यादा-से-ज़्यादा बोलने के अनुभव देने, और पढ़ने-लिखने से जुड़ी कुछ ऐसी रचनात्मक गतिविधियाँ कराने की आवश्यकता है जो बच्चों के आत्मविश्वास को बढ़ाएँ।

सुमन पटैल ने डॉ हरिसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय सागर से इतिहास में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। स्कूलों में शिक्षकों के साथ बाल साहित्य को लेकर काम करने में उनकी विशेष रुचि है। बच्चों के लिए लघु कहानियाँ और कविताएँ लिखने के साथ-साथ बुन्देली भाषा में कहानी सुनाने की विधा को लेकर शिक्षकों और बच्चों के साथ निरन्तर काम करती रहती हैं। सुमन 2020 में एसोसिएट के बतौर अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़ी थीं। वर्तमान में टीचर एजुकेटर के रूप में मध्य प्रदेश में सागर ज़िले के राहतगढ़ ब्लॉक में कार्यरत हैं।

सम्पर्क : suman.patel@azimpremjifoundation.org